सवालीराम

पिछली बार सतीश यादव और सुशील यादव ने सवालीराम से दो सवाल पूछे थे। 'पहाड़ कैसे बने?' और 'दिन में तारे क्यों नहीं दिखाई देते?' इन दोनों सवालों के जवाब यहां दिए जा रहे हैं।

लावा से बना जापान का फूजीयामा पहाड़

पहाड़ कैसे बने

जवाब: पहाड़ का नाम लेते ही स्कूली किताबों में पढ़े हुए ढेर सारे नाम याद आने लगते हैं – अरावली, सतपुड़ा, विंध्याचल, हिमालय, रॉकी, एंडीज़ .... वगैरह। हो सकता है इनमें से कुछ पहाड़ों की आपने सैर भी की होगी। यह तो आपने ज़रूर महसूस किया होगा कि पहाड़ों का ताल्लुक ऊंचाई से है – आसपास की ज़मीनी सतह के मुकाबले पहाड़ ऊंचे होते हैं। कभी-कभी किसी समतल-सपाट गांव या शहर के पास भी छोटी-मोटी ऊंचाइयां दिखती हैं जिसे लोग पहाड़िया, टेकरी, पहाड़ी जैसे नामों से पुकारते हैं। ये टेकरियां हमारे आसपास का बेहद सामान्य-सा तथ्य

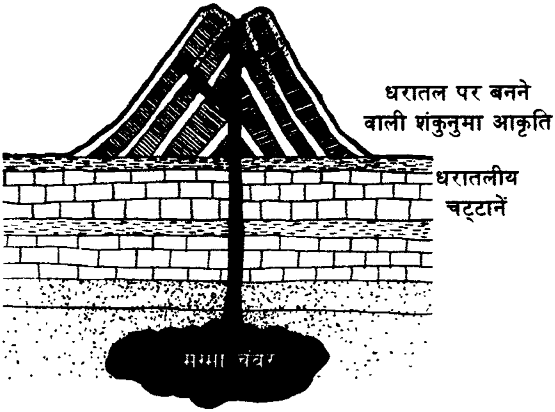

ज्वालामुखी उद्गारों से मैग्मा, चट्टानों के टुकड़े, गैस आदि धरातल के बाहर निकलते हैं और इनसे अक्सर एक शंकुनुमा पहाड़ का निर्माण होता है। पहाड़ बनने के विभिन्न कारकों में से एक प्रमुख तरीका है यह। पिछले पृष्ठ का फोटो जापान के प्रसिद्ध ज्वालामुखी पहाड़ फुजीयामा का है। बर्फ से ढकी इसकी चोटी से आज भी मैग्मा निकल पड़ता है।

हैं। चाहे होशंगाबाद हो या देवास, ऐसी टेकरियां दिख ही जाती हैं।

पहाड़ कैसे बनते हैं इस पर विचार करने से पहले उनसे संबंधित एक-दो अन्य बातों पर गौर कर लें:

— पहली बात तो यह कि दुनिया के सारे पहाड़ एक ही समय नहीं बने हैं। कुछ पहाड़ 40-50 करोड़ साल से भी ज़्यादा पुराने हैं तो कुछ ऐसे भी हैं जो महज 50 लाख साल पहले बनना शुरू हुए होंगे। लेकिन एक हकीकत यह भी है कि धरती के इतिहास में समय-समय पर पहाड़ बनने का युग आता रहा है जब एक साथ कई जगह पहाड़ बन रहे होते हैं। ऐसा ही एक युग 7-8 करोड़ साल पहले शुरू हुआ था जिसे टर्शरी युग के नाम से जाना जाता है।

दूसरी बात यह कि यहां पर सिर्फ मोटे तौर पर पहाड़ बनने की प्रक्रियाओं के बारे में बात की जा रही है। वैसे तो हरेक पहाड़ का एक अपना इतिहास होता है कि वह कब बनना शुरू हुआ, किन प्रक्रियाओं से होकर गुज़रा, आदि। लेकिन यहां हम उतनी गहराई में चर्चा नहीं करेंगे।

बहुत ज़्यादा बारीकियों में न जाएं तो यह कहा जा सकता है कि पहाड़ चार-पांच तरीकों से बनते हैं। यही नहीं, किसी पहाड़ के बनने में एक से ज़्यादा प्रक्रियाएं भी शामिल हो सकती हैं।

मैग्मा-लावा से बनने वाले पहाड़

धरती के भीतर कुछ किलोमीटर की गहराई में मैग्मा पाया जाता है। यह मैग्मा कई बार धरती की ऊपरी परत को चीरकर धरातल पर निकल आता है। इस क्रिया को ज्वालामुखी फूटना कहते हैं। ज्वालामुखी से निकलने वाला मैग्मा यदि काफी तरल हुआ तो जल्दी ही आसपास के इलाके में फैल जाएगा। यदि मैग्मा गाढ़ा हो तो जिस छेद से निकल रहा है उसके आसपास इकट्ठा होता जाएगा। मैग्मा निकलने की क्रिया थोड़े-थोड़े अंतराल पर होती रही तो एक शंकुनुमा आकार बन जाएगा। जितनी बार मैग्मा इससे निकलेगा, शंकु की ऊंचाई बढ़ती ही जाएगी। ऐसे पहाड़ पूरी दुनिया में कई जगह मिलते हैं। विशेष तौर पर इटली, जापान और हवाई द्वीप में आज भी इनके क्रियाशील उदाहरण देखे जा सकते हैं।

बाहर निकलने वाला मैग्मा धरातल पर किसी एक छेद से न निकलकर लंबी-लंबी दरारों के मार्फत निकले तो तरल लावा आसपास के इलाकों में फैल जाता है। लावा फैलने की यह घटना बार-बार दोहराई जाती रही तो उस इलाके में सीढ़ीनुमा पहाड़ियां बनने लगती हैं। इसका सबसे अच्छा उदाहरण भारत का डेक्कन ट्रेप (दक्कन का पठार) है। ऐसे पहाड़ बंबई के आसपास पश्चिमी घाट शृंखला में भी देखे जा सकते हैं। मैग्मा-लावा से बनने वाले ऐसे सब पहाड़ों की चट्टानें आग्नेय चट्टानें कहलाती हैं।

दरारों व मोड़ों से बनते पहाड़

धरती के भीतर चट्टानी परतों पर विविध दिशाओं से लगने वाले बलों की वजह से कई बार काफी लंबी-लंबी दरारें बन जाती हैं। इन दरारों को फॉल्ट लाइन कहा जाता है। इन दरारों की लंबाई 50-100 किलोमीटर होना आम बात है। इसी तरह इन दरारों की गहराई कुछ किलोमीटर तक हो सकती है। परन्तु यह ज़रूरी नहीं है कि धरती की सतह पर ये फॉल्ट लाइन स्पष्ट दरारों के रूप में दिखें। कभी-कभी ऐसी दरारों की वजह से बने हुए हिस्सों में से, किसी एक पर लगने वाले बलों के कारण वह हिस्सा ऊपर की ओर उठ जाता है। यह दूसरा कारक है पहाड़ बनने का।

आंतरिक या बाह्य बल लगने वाली प्रक्रिया में एक और किस्म के पहाड़ बनते हैं। किसी विशाल झील या बेसिन में हज़ारों-लाखों सालों तक अवसाद (सेडिमेंट) परत-दर-परत एकत्रित होते

अ

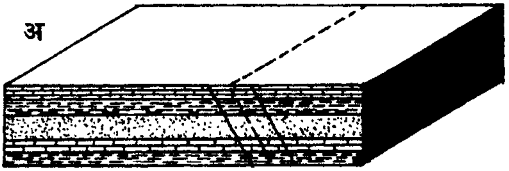

फॉल्ट से बनने वाले पहाड़: धरती की भीतरी चट्टानों पर काम कर रहे बलों के कारण उन में लंबी-लंबी दरारें पड़ जाती हैं। **(चित्र: अ)**

ब

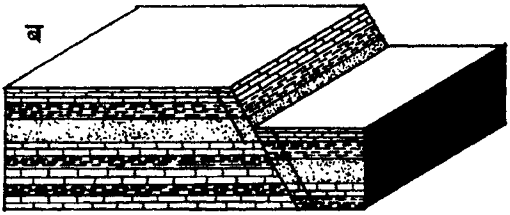

दरारों से विभाजित हिस्सों पर लगने वाले बलों की वजह से चट्टानी परतों का एक हिस्सा ऊपर की ओर उठ गया है जो तेज़ ढाल वाली पहाड़ी जैसा लग रहा है। **(चित्र: ब)**

स

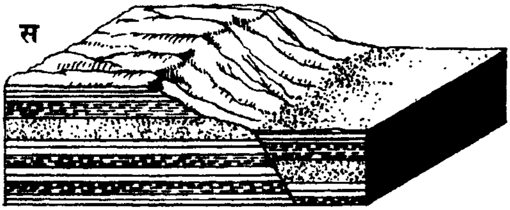

इस ऊपर उठे हिस्से पर हवा, पानी, तापमान के प्रभाव की वजह से तेज़ ढाल वाली पहाड़ी थोड़ी कटी-फटी सी दिखने लगी है, लेकिन फिर भी आसपास के इलाके की तुलना में यह पहाड़ी ही कहलाएगी। **(चित्र: स)**

फोल्डिंग और कटाव से बने पहाड़: फोल्डिंग से बनने वाले पहाड़ों को समझने के लिए 10-15 टाइपिंग पेपर ले लीजिए। बस इस बात का ध्यान रहे कि पेपर तुड़े-मुड़े न हों। कागज़ की इस थप्पी को किसी समतल सतह पर रखकर दोनों हाथों से इसके लंबे किनारों को एक-दूसरे की ओर दबाकर देखिए क्या होता है। इसी तरह कम लंबाई वाले किनारों को भी दबाकर देखिए कि क्या होता है। दोनों सतहों पर दबाव बराबर होने या दबाव में अंतर होने पर कागज़ की थप्पी से किस तरह की आकृति बनती है? ये जो भी आकृतियां बन रही हैं उन्हें वलन (Folding) कहा जाता है। धरती पर भी परतदार चट्टानों पर लगने वाले बलों की वजह से वलित पहाड़ियां बन जाती हैं। ऐसी ही एक पहाड़ी सामने के पेज पर चित्र:1 में दिखाई गई है।

चित्र:2 में दिखाई गई पहाड़ी एक मरुस्थलीय इलाके की है जहां गर्म दिन, ठंडी रातें, शुष्क हवा की मार सहते हुए कुछ चट्टानें तो प्रतिरोध कर पा रही हैं लेकिन कुछ मुकाबला नहीं कर सकीं जिसकी वजह से वे छोटे-छोटे टुकड़ों में तब्दील होती जा रही हैं। प्रतिरोध कर सकने वाली चट्टानें भी इस मौसम से प्रभावित होती हैं लेकिन कम मात्रा में। परिणाम स्वरूप यहां पहाड़ी ढाल निर्मित हो गया है और एक छोटी पहाड़ी बन गई है।

I

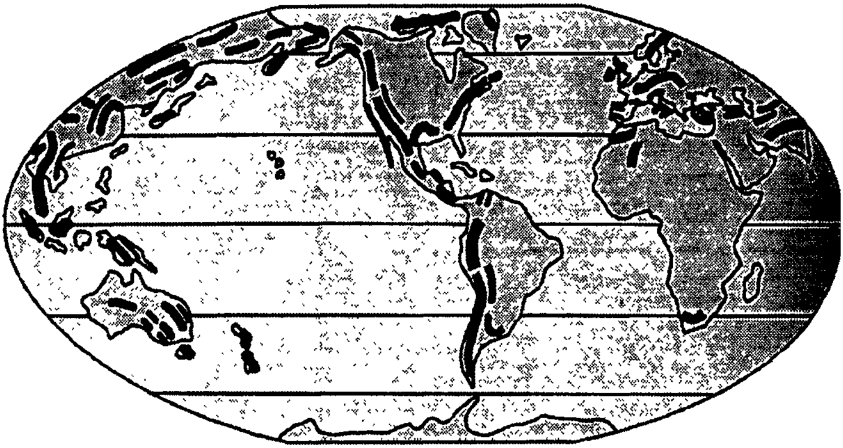

ऊपर: दुनिया के इस नक्शे में मोटी काली लकीरें महाद्वीपों के उन इलाकों को दर्शा रही हैं जहां भूतकाल में प्लेट के किनारों पर पर्वत शृंखलाएं विकसित हुई थीं। चित्र से यह भी साफ झलकता है कि समस्त पर्वत शृंखलाएं आज के महाद्वीपों के किनारों पर स्थित नहीं हैं।

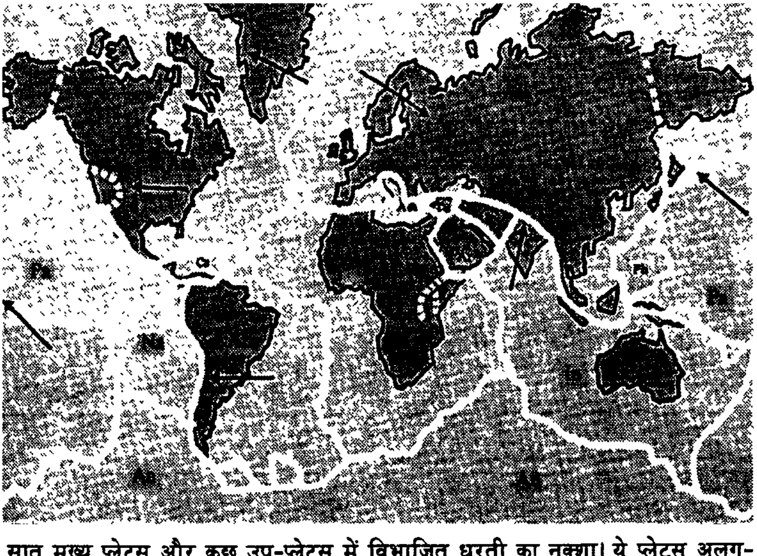

सात मुख्य प्लेट्स और कुछ उप-प्लेट्स में विभाजित धरती का नक्शा। ये प्लेट्स अलग-अलग दिशाओं में खिसक रही हैं। इनके खिसकने की दिशाओं को तीर से दिखाया गया है। सफेद मोटी रेखाएं प्लेट्स की सीमाएं हैं। प्रमुख प्लेट्स इस प्रकार हैं: अफ्रिकन (Af), अमेरिकन (Am), अंटार्कटिक (An), यूरेशियन (Eu), इंडियन (In), पेसेफिक (Pa) और नज़का (Na)।

रहते हैं। इन अवसादों पर लगने वाले बलों की वजह से अवसादों की परतों में मोड़ पड़ जाते हैं जिससे पहाड़ बनते हैं। इनमें पाई जाने वाली चट्टानों को अवसादी या परतदार चट्टानें कहा जाता है।

कभी-कभी अवसादों की क्षैतिज परतों पर इस तरह से बल लगता है कि क्षैतिज परतें टेढ़ी हो जाती हैं, जिससे ऊपर उठी परतें पहाड़ का स्वरूप ले लेती हैं। सतपुड़ा-विंध्याचल की पहाड़ियां भी इन्ही प्रक्रियाओं से गुज़री हैं।

हिमालय जैसी शृंखलाएं बनना

अभी तक जिन प्रक्रियाओं की बात की है उनसे 200-500 किलोमीटर के इलाके में फैले पहाडों के बनने की प्रक्रिया तो समझी जा सकती है लेकिन हिमालय, रॉकी, एंडीज़ जैसी सैकड़ों-हज़ारों किलोमीटर तक फैली ऊंची और लंबी पर्वत शृंखलाएं किस तरह बनी होंगी यह समझ पाना थोड़ा कठिन है।

भूगोल या भूविज्ञान की किताबों में इस बात का ज़िक्र मिलता है कि धरती की ऊपरी सतह सात प्रमुख प्लेट्स में विभाजित है। साथ दिए नक्शे को देखकर आपको यह अंदाज़ लग जाएगा कि इन प्लेट्स का फैलाव कितना है। प्लेट्स के फैलाव के साथ एक और नक्शा है जिसमें दुनिया के प्रमुख महाद्वीप और प्रमुख पर्वत शृंखलाएं दर्शाई गई हैं। यदि आप इन नक्शों पर गौर करें तो पाएंगे कि महाद्वीपों के किनारों पर या प्लेट्स के किनारों पर ही काफी सारी पर्वत शृंखलाएं मौजूद हैं। हमारी आज की समझ के अनुसार दुनिया की समस्त विशाल पर्वत शृंखलाएं जब कभी भी वे बनना शुरू हुईं, प्लेट्स के किनारों पर ही पैदा हुई हैं।

अगर दो प्लेट्स की सीमाएं समुद्र के अंदर हैं तो उनके आपस में टकराने से उस क्षेत्र में द्वीप उभर सकते हैं जैसा कि जापान के साथ हुआ।

अगर एक प्लेट समुद्री है और दूसरी महाद्वीपीय, तो संभव है कि समुद्रीय प्लेट का पदार्थ महाद्वीप की पपड़ी के नीचे समाता जाएगा। ऐसे क्षेत्रों में काफी उथल-पुथल पाई जाएगी।

परन्तु अगर आपस में टकराने वाली दोनों प्लेट्स पर महाद्वीपीय धरातल है तो आपसी टकराहट में ज़मीन को ऊपर की ओर उठे बिना कोई चारा ही नहीं है। ऐसी ही प्रक्रिया आज से लगभग पांच करोड़ साल पहले शुरू हुई जब भारतीय प्लेट एशियन प्लेट से टकराई जिसकी वजह से आज हमें हिमालय जैसी भीमकाय व विशाल शृंखला देखने को मिलती है।

समुद्र में भी पहाड़

महाद्वीपों पर तो काफी सारे पहाड़ दिखाई देते हैं लेकिन समुद्र की तली

पहाड़ बनने का युग

भूवैज्ञानिकों का ऐसा मानना है कि वर्तमान समय में हम जिन सात महाद्वीपों को एक दूसरे से दूर-दूर पूरी पृथ्वी पर फैले देखते हैं वे सब आज से लगभग 18 करोड़ साल पहले आपस में सटे हुए थे। इनके दो समूह थे। पहला था – लारेशिया समूह – उत्तरी अमेरिका, यूरोप, एशिया। दूसरा समूह था – गोंडवाना समूह – आफ्रिका, दक्षिणी अमेरिका, भारत, आस्ट्रेलिया, अंटार्कटिका। लगभग 18 करोड साल पहले इन दोनों ममूहों के भूखंड़ों में दरारें पड़ने लगी और ये टूटकर अलग होने लगे थे।

टर्शरी युग यानी वो दौर जो तकरीबन 7-8 करोड़ साल पहले शुरू होता है। जब भारतीय प्लेट की यूरेशियन प्लेट से, और आफ्रिकन प्लेट की भी यूरेशियन प्लेट से टकराहट शुरू होती है। इसी तरह अमेरिकी प्लेट के दक्षिणी हिस्से की नज़्का प्लेट से ज़ोर आजमाइश शुरू होती है। कुल मिलाकर आप देखेंगे कि इस दौर में एक साथ हिमालय, आल्पस व एंडीज़ बन रहे थे। धरती पर एक साथ इतनी सारी जगहों पर पर्वत शृंखलाएं बनने की प्रक्रिया चल रही थी इसलिए इस दौर को पर्वत निर्माण का दौर कहा जाता है।

संक्षेप में धरती के पिछले 45 करोड़ साल के प्लेट्स के इतिहास को देखा जाए तो इसमें कुछ प्रमुख पड़ाव इस तरह से थे:

42 **करोड़ साल पहले:** उत्तर अमेरिका और यूरोप में टकराव हुआ और परिणाम-स्वरूप नार्वे, पूर्वी ग्रीनलैंड, स्काटलैंड की पर्वत शृंखलाएं बनीं। और अमेरिका-यूरोप आपस में जुड़ गए।

32 **करोड़ साल पहले:** यूरो-अमेरिकन प्लेट की आफ्रिकी प्लेट से टक्कर शुरू हुई। परिणाम-स्वरूप अमेरिका में अल्पेशियन पर्वत शृंखला का निर्माण हुआ।

22.5 **करोड़ साल पहले:** यूरो-अमेरिकन प्लेट की टक्कर एशियाई प्लेट से हुई। परिणाम-स्वरूप यूराल पर्वत शृंखला बन सकी। एक तरफ लारेशिया समूह पूरा बन गया। दूसरी ओर गोंडवाना समूह भी तैयार हो गया था। इन दोनों का सम्मिलित नाम पेंजिया था।

18 **करोड़ साल पहले:** पेंजिया टूटने लगा। और अलग-अलग प्लेट्स अपने-अपने गंतव्यों की ओर चल पड़ी।

7 **करोड़ साल पहले:** अमेरिकन प्लेट में टूट-फूट की वजह से रॉकी पर्वत शृंखला बनी। इसकी उत्पत्ति का कारण बहुत स्पष्ट नहीं है। साथ ही हिमालय, आल्पस और एंडीज़ का निर्माण शुरू हुआ।

भी एकदम समतल सपाट नहीं है। वहां भी खूब सारे पहाड़ पाए जाते हैं – नुकीली चोटियों वाले, सपाट चोटियों वाले, सब तरह के। इतना ही नहीं समुद्र के अंदर लंबी-लंबी पर्वत शृंखलाएं भी मौजूद हैं।

समुद्र के भीतर पाई जाने वाली पर्वत शृंखलाओं का संबंध भी प्लेट के खिसकने से जुड़ा हुआ है। आपस में सटी हुई दो प्लेट जब एक-दूसरे से दूर खिसकने लगती हैं तो दोनों प्लेट के बीच की खाली जगह को नीचे से आने वाला मैग्मा भरता जाता है। इस तरह लावा की लंबी-लंबी पर्वत शृंखलाएं बनती हैं। पिछले पेज पर दिया गया प्लेट्स का मानचित्र ध्यान से देखिए। इस मानचित्र में कई जगह समुद्र के अंदर सफेद मोटी लकीरों के दोनों ओर प्लेट्स एक-दूसरे से दूर जा रही हैं। ऐसे स्थानों पर ये सफेद लकीरें मुख्यतः बेसाल्ट नामक चट्टान से बनी पर्वत शृंखलाएं दिखा रही हैं क्योंकि वहां दूर जाती हुई प्लेट्स के बीच बन रही जगह में मैग्मा के लगातार ऊपर आने की वजह से आज पर्वत शृंखलाएं बनती जा रही हैं, बढ़ती जा रही हैं।

अटलांटिक महासागर की पर्वत शृंखला को मिड अटलांटिक रिज नाम से जाना जाता है जो उत्तरी ध्रुव से दक्षिणी ध्रुव तक फैली है। प्रशांत महासागर के पूर्वी हिस्से में ईस्ट पेसेफिक राइज़। हिन्द महासागर में कार्ल्सबर्ग रिज और मिड इंडियन रिज फैली हुई हैं। इन पर्वत शृंखलाओं की तुलना आप हिमालय-आल्पस या रॉकी-एंडीज़ से करेंगे तो समझ में आएगा कि समुद्र के अंदर की कई पर्वत शृंखलाएं धरातल पर मौजूद पहाड़ों से भी बहुत बड़ी हैं।

आखिरी बात यह कि मुहावरों में कहा जाता है कि 'पहाड़ की तरह अटल' लेकिन पहाड़ धरती पर हमेशा बनी रहने वाली संरचना नहीं है। अपना ही अनुभव बताऊं तो तकरीबन 25 साल पहले मेरे घर के पास एक छोटी पहाड़ी होती थी। उस पहाड़ी में छुई मिट्टी (क्ले) बहुतायत में मिलती थी। पिछले कुछ सालों में उस पहाड़ी से अंधा-धुंध तरीके से छुई मिट्टी निकाली गई। ट्रक-के-ट्रक लादे जा रहे हैं। अब वो पहाड़ी दो-तिहाई से ज़्यादा खत्म हो गई है।

ऐसा नहीं है कि पहाड़ों को खतरा सिर्फ इंसानों से ही है – हवा, पानी, बर्फ, तापमान, चट्टानों के खिसकने-धसकने जैसी वजहों से भी ऊंचे पहाड़ धीरे-धीरे सपाट होते जाते हैं।

** प्लेट टेक्टॉनिक्स के संबंध में और अधिक जानकारी के लिए संदर्भ के अंक 14 और 15 में प्रकाशित लेख देखिए।*

दिन में तारे क्यों नहीं दिखाई देते ?

जवाब : यहां आपका आशय शायद यही है कि जिस तरह रात में ढेर सारे तारे दिखाई देते हैं वैसे दिन के आसमान में वे हमें क्यों नहीं दिखते?

दिन में तारों की रोशनी को देख पाने या न देख पाने में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका हमारा वायुमंडल निभाता है। हमारे वायुमंडल में गैस, धूलकण, जल वाष्प, अन्य कई तरह के कण आदि होते हैं; जो प्रकाश तरंगों को सोखते हैं, परावर्तित करते हैं, बिखेरते हैं यानी उनकी स्केटरिंग करते हैं व उन्हें आरपार जाने देते हैं। इसी सब की वजह से हमें दिन में केवल सूरज की चकती ही नहीं, बल्कि पूरा आसमान उजला या चमकता हुआ दिखाई देता है। आपको यह जानकर शायद आश्चर्य होगा कि यही कारण है कि चांद, जिसका अपना कोई पृथ्वी जैसा वातावरण नहीं है, की सतह से दिन के समय भी सूरज की प्रकाशित चकती को छोड़ शेष आकाश काला दिखता है, नीला या और किसी रंग का नहीं।

यानी कि दिन के समय पृथ्वी के वातावरण के कारण पूरा आकाश ही कुछ हद तक चमकने लगता है; और चूंकि तारों की रोशनी आसमान की इस चमक के सामने कमज़ोर पड़ जाती है इसलिए दिन में वे हमें आकाश में नहीं दिखाई देते। परन्तु गुरू, शुक्र और मंगल जैसे कुछ ग्रह जो इनसे ज़्यादा चमकते हैं वे ज़रूर यदा-कदा दिन में भी दिख जाते हैं।

सूरज की चमकदार मौजूदगी और

आसमान का रंग कौन-सा

आसमान कौन से रंग का दिखाई देगा यह इस बात पर निर्भर करता है कि सूर्य किरणों के वर्णक्रम में से कौन-से रंग यानी किस तरंग लंबाई की किरणें वातावरण के कणों ने ज़्यादा सोख ली हैं और कौन-सी सबसे ज़्यादा बिखेर दी गई हैं। और यह सब इससे तय होता है कि सूर्य से आने वाली किरणों के रास्ते में मौजूद कणों की प्रकृति क्या है, उनका साइज़ क्या है, उनकी सघनता कितनी है आदि, आदि। इसीलिए जबकि आमतौर पर दिन में आकाश नीला होता है और सुबह-शाम लाली लिए हुए परन्तु समय-समय पर हमें अन्य रंगों की छटाएं भी दिखती रहती हैं।

स्पेस टेलीस्कोप

वायुमंडल की बाधाओं और कृत्रिम प्रकाश की वजह से होने वाली दिक्कतों को देखते हुए दुनिया भर में खगोल विज्ञान संबंधी अधिकतर वेध-शालाएं ऊंचे स्थानों पर ही बनाई जाती हैं जहां हवा की परत अपेक्षाकृत पतली और सूखी होती है। इतना ही नहीं यह भी कोशिश होती है कि पहाड़ों पर भी ये ऐसे स्थानों पर हों जो चारों ओर से चोटियों से घिरे हों ताकि दूर दूर से कोई रोशनी की किरण पास न फटक सके।

1990 में इन्हीं सब बाधाओं को देखते हुए अंतरिक्ष में टेलीस्कोप स्थापित करने का विचार सामने आया और हब्बल स्पेस टेलीस्कोप को 600 किलोमीटर की ऊंचाई पर स्थापित कर दिया गया, जहां से वो धरती के चारों ओर घूमते हुए सुदूर अंतरिक्ष की तस्वीर ले रहा है। इस टेलीस्कोप की मदद से हम अंतरिक्ष की उन गहराइयों को देख पा रहे हैं जो आज से पहले कभी संभव नहीं था।

नीले आसमान की पृष्ठभूमि में ऐसा क्या होता है कि दिन में तारे देखना दुष्कर हो जाता है इसकी जांच आप एक छोटा-सा प्रयोग करके भी देख सकते हैं। इस प्रयोग के लिए एक गत्ते का डिब्बा लीजिए। उस पर किसी तारामंडल के समान 8-10 महीन छेद बना लीजिए व उन पर सफेद कागज़ चिपका लीजिए।

इस डिब्बे को अंधेरे कमरे में रखकर उसके भीतर बल्ब लगाकर जलाने पर सफेद कागज़ पर आपको तारों जैसे चमकदार बिन्दु दिखाई देने लगेंगे। अब इस बल्ब को इसी तरह जलने दीजिए और कमरे में मौजूद दूसरा बल्ब या ट्यूबलाइट जला लीजिए। आप देखेंगे कि सफेद कागज़ पर दिखने वाले चमकदार बिन्दु या तो गायब हो चुके हैं या एकदम ही धुंधले हो जाते हैं।

इसी प्रक्रिया को एक और उदाहरण से भी समझा जा सकता है। आप सबने महसूस किया होगा कि किसी भी बड़े शहर या कस्बे में रात को उतने तारे नहीं दिखते जितने गांव या जंगल में दिखाई देते हैं। कभी सोचा है कि ऐसा क्यों होता है? आपके आसपास भरपूर रोशनी हो तो आपको काफी गिने-चुने तारे दिखाई देंगे। लेकिन यदि पांच मिनट के लिए पूरे शहर की बिजली गुल हो जाए तो देखिए आपको पहले से कहीं ज्यादा तारों वाला आसमान दिख रहा होगा। ऐसे ही महानगरों में तो रात को सड़कों और मकानों पर मौजूद तेज़ रोशनी की वजह से क्षैतिज

से 20-30 डिग्री ऊपर तक तारों का कोई नामो-निशान ही नहीं दिखता। दिन के समय तो सूरज की रोशनी वायुमंडल के कारण बाधा उत्पन्न करती है लेकिन रात के समय बिजली से जलने वाले बल्ब भी वैसा ही काम करते हैं।

एक समय तक यह माना जाता था कि किसी कुएं या खदान में से या ऊंची-ऊंची इमारतों के बीच में खड़े होकर दिन का आसमान निहारा जाए तो तारे देख पाना संभव है। परन्तु यह सही नहीं है। सैद्धांतिक रूप से देखा जाए तो आप कुएं या खदान में बैठे हों या ऊंची इमारतों के साए तले हों, आपके ऊपर वातावरण की तह तो वैसी की वैसी बनी हुई है।

परन्तु इस बात के प्रमाण ज़रूर मिलते हैं कि ऊंचे पहाड़ों की चोटियों से कभी-कभार दिन के समय भी अत्यन्त चमकीले तारे दिख जाते हैं। ऐसा ही एक उल्लेख तुर्की के माउंट अरारात (ऊंचाई 5000 मीटर) के बारे में मिलता है जहां से दोपहर के दो बजे गहरे नीले आसमान में कुछ चमकीले तारे देखे गए थे। ऊंचे पहाड़ों पर से तो दिन में कुछ चमकीले तारे दिखाई दे जाने का कारण समझ में आता है क्योंकि वायुमंडल की घनी, जलवाष्प युक्त और धूलमय परत तो नीचे ही होती है। इसलिए ऊंची चोटियों के ऊपर का आसमान अपेक्षाकृत कम चमकीला होना चाहिए।

■ ■ ■ ■ ■ ■ ■ ■ ■ ■ ■